डॉ. दीपक सिंह

वर्तमान में राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय अम्बिकापुर में सहायक प्राध्यापक हिन्दी के पद पर कार्यरत हैं। शुरुआती शिक्षा गांव से लेने के बाद उन्होंने स्नातक से लेकर पीएचडी तक की अपनी पढ़ाई इलाहाबाद विश्वविद्यालय से की है। अध्ययन-अध्यापन में गहरी रुचि।

डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय

राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय अंबिकापुर में हिंदी के असिस्टेंट प्रोफेसर हैं। प्रारंभिक शिक्षा गांव और रीवा से। आगे की पढ़ाई इलाहाबाद विश्वविद्यालय से। जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली से पीएचडी की उपाधि। आदिवासी जीवन के विभिन्न पहलुओं पर कई शोध आलेख प्रकाशित। आदिवासी जीवन और संस्कृति पर गंभीर अध्येता की छवि।

मूल्य : ₹ 350/-

ISBN 978-81-19335-59-6

रुद्रादित्य प्रकाशन
190 एम.आर/3-एन, ओ.पी.एस. नगर, कालिन्दीपुरम,
प्रयागराज (उ.प्र.) पिन-211011 फोन 8187937731

साहित्य और पर्यावरण
डॉ. दीपक सिंह | डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय

साहित्य और पर्यावरण

संपादक
डॉ. दीपक सिंह
डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय

है। बीसवीं शदी के तीसरे दशक में ही जयशंकर प्रसाद ने अपनी कालजयी कृति कामायनी के माध्यम से समूची मानवजाति को भोग और विलास की संस्कृति के खतरे के खिलाफ चेतावनी देते हुए प्राकृतिक जीवन-दर्शन की रूप-रेखा हमारे सामने प्रस्तुत की थी लेकिन हमारी सत्ता संरचना ने उसका संज्ञान नहीं लिया—

बधी महावट से नौका थी, सूखे में अब पड़ी रही
उतर चला था वह जल-प्लावन, और निकलने लगी मही
निकल रही थी मर्म वेदना करुण विकल कहानी सी,
वहाँ अकेली प्रकृति सुन रही, हँसती सी पहचानी सी !

अतिशय भोग और लालसा ने ही देव सभ्यता का विनाश किया था। यह त्रासदी ही कही जाएगी कि हमने कामायनी जैसी बौद्धिक उपलब्धि से कुछ नहीं सीखा। साथ ही गाँधी जी द्वारा प्रस्तावित आर्थिक ढांचे और लालच की संस्कृति से बचने के प्रस्ताव को भी विकास के रास्ते में बाधा के रूप में देखा गया। स्थिति यहाँ तक आ पहुंची है कि न हवा साफ बची है न पानी। हमारे पूर्वजों ने कभी सोचा भी नहीं होगा कि एक दिन ऐसा भी आयेगा जब पानी, हवा, बाजार से खरीदे जायेंगे। विकास की तमाम ऊँचाइयाँ लांघ कर भी हम एक तितली का जीवन संरक्षित कर पाने में नाकाम हैं। आज पर्यावरण का जो संकट हमारे सामने खड़ा है वह अतिशय भोग और लालसा की ही उपज है।

प्रकृति से साहित्य का सम्बन्ध हवा-पानी की तरह है। पूरी दुनिया की लोक कथाओं, गीतों और प्रर्थानाओं में प्रकृति विविध रूप में अभिव्यक्त हुई है। प्रकृति की शक्ति, सौन्दर्य गान से शुरू हुई यह यात्रा आज पर्यावरण संकट से रूबरू है। एक युद्ध जैसी स्थिति हर समय हमारे समक्ष बनी हुई है। 'नई कॉलोनी' कविता में दिनेश कुमार शुक्ल लिखते हैं—

'अरावली पर्वतमाला फिर हार मानकर
आज और कुछ ज़्यादा पीछे खिसक गयी है
भय से आँखें बन्द किये मैं देख रहा हूँ
इन्द्रप्रस्थ के पास खांडव-वन को खाता
छिड़ा हुआ इक घमासान है–
जिसमें धरती हार रही है'

धरती की हार प्राणी-मात्र की हार होगी। धरती के संघर्ष में हम सभी को भागीदार बनना होगा और लौटना होगा प्रकृति की ओर। प्रस्तुत पुस्तक 16-17 मार्च 2023 को राजीवगांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय अंबिकापुर में 'साहित्य और पर्यावरण' विषय पर आयोजित अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार में पढ़े गए पर्चों का संकलन है। उम्मीद है कि पुस्तकाकार रूप में यह पर्यावरणीय सरोकारों को बढाने और हिन्दी क्षेत्र में एक सार्थक बहस को संचालित करने में मददगार होगी।

●●●

अनुक्रम

भूमिका 5

1. आदिवासी साहित्य और प्रकृति का सह-अस्तित्व —डॉ. विश्वासी एक्का 9
2. मनुष्य का जीवन और पारिस्थितिकी तंत्र —नीलाभ कुमार 15
3. समकालीन साहित्य में पर्यावरणीय चिन्तन —डॉ. के. आशा 22
4. लोक गीतों में प्रकृति के विविध रूप —अजय कुमार तिवारी 26
5. डॉ. श्यामसुन्दर दुबे के साहित्य में पर्यावरणीय चिन्तन —जीतन राम पैकरा 34
6. केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में प्रकृति एवं खेती-किसानी —डॉ. बृजेश कुमार पाण्डेय 45
7. Climate Change and Water Crisis in Eco-films *Kadvi Hawa* and *Turtle* —Dr. Bhanupriya Rohila 51
8. Ecocritical Reading of Literature : Understanding the Silencing of Nature —Dr. R.P. Singh 60
9. टिकाऊ कृषि तंत्र एवं स्मार्ट कृषि-एक सैद्धांतिक विश्लेषण —डॉ. अनिल कुमार सिन्हा, दीपिका स्वर्णकार 68
10. पर्यावरण व पारिस्थितिकी का स्वरूप एवं अंतःसंबंध —वी सुगुणा 81
11. राजस्थानी चित्रकला में प्रकृति —कमल किशोर कश्यप 88
12. साहित्य में पर्यावरण संरक्षण एवं संचेतना : एस आर हरनोट —संजीव कुमार मौर्य 92
13. पर्यावरण व गहन पारिस्थितिकी : गाँधी एवं अंबेडकर की नजर से —गोपाल 104
14. बोधकथा साहित्य एवं पर्यावरण चिंतन —सुशील कुमार तिवारी 112
15. यह नरम-हरा-कच्चा संसार —ऋचा वर्मा 122
16. मानव और प्रकृति का अंतर्संबंध तथा समकालीन हिंदी उपन्यास —प्रियंका जायसवाल, डॉ. उमेश कुमार पाण्डेय 129
17. हिंदी उपन्यासों में व्यक्त पर्यावरणीय प्रदूषण एवं खतरे —अक्षतानंद पाण्डेय 135
18. प्राकृतिक संसाधन का दोहन और पर्यावरणीय संकट —डॉ. क्रेसेन्सिया टोप्पो, डॉ. सुशील कुमार टोप्पो 142
19. पर्यावरण संरक्षण : हड़प्पा और वैदिक सभ्यता —डॉ. अजय पाल सिंह 147
20. आदिवासी साहित्य में जल-जंगल और जमीन का संघर्ष —डॉ. कुसुम माधुरी टोप्पो 150
21. कालिदास के साहित्य में पर्यावरण रक्षा के उपाय —राजीव कुमार 157

टिकाऊ कृषि तंत्र एवं स्मार्ट कृषि-एक सैद्धांतिक विश्लेषण

डॉ. अनिल कुमार सिन्हा
भूगोल विभाग
राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अंबिकापुर, छत्तीसगढ़ .

दीपिका स्वर्णकार
सहायक प्राध्यापक–भूगोल
राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अंबिकापुर, छत्तीसगढ़

कृषि मानव सभ्यता के प्राचीनतम उद्यमों में से एक है। यह निर्विवाद विषय कि मानव विकास के साथ कृषि का भी सतत् विकास होता गया है। घुमंतू जीवन से निकलकर मानव गाँव बसाकर भोजन एवं आहार प्राप्ति के लिए खेती के महत्व को बहुत पहले समझ लिया था। तत्कालीन समय में समूची अर्थव्यवस्था की धुरी विशेष कर ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि के इर्द-गिर्द ही घुमती थी, और वर्तमान में भी किसी न किसी रूप में अभी भी विद्यमान है। सम्पूर्ण विश्व में बढती हुई जनसंख्या एक गंभीर समस्या है। बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ भोजन की आपूर्ति के लिए मानव द्वारा खाद्य उत्पादन की होड़ में अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए तरह-तरह की रासायनिक खादों, जहरीले कीटनाशकों का उपयोग, प्रकृति के जैविक और अजैविक पदार्थों के बीच आदान-प्रदान, मृदा व वातावरण को प्रभावित करता है, जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति खराब हो जाती है, साथ ही वातावरण प्रदूषित होता है तथा मनुष्य के स्वास्थ्य में गिरावट आती है। प्राचीन काल में मानव स्वास्थ्य के अनुकूल तथा प्राकृतिक वातावरण के अनुरूप खेती की जाती थी, जिससे जैविक और अजैविक पदार्थों के बीच आदान-प्रदान का चक्र निरन्तर चलता रहता था, जिसके फलस्वरूप जल, भूमि, वायु तथा वातावरण प्रदूषित नहीं होता था।

टिकाऊ कृषि एक कृषि पद्धति है जो भविष्य की पीढ़ियों की अपनी जरूरतों को पूरा करने की क्षमता को संरक्षित करते हुए वर्तमान की जरूरतों को पूरा करने का प्रयास करती है। इसमें उन तरीकों का उपयोग करना शामिल है जो पर्यावरण के अनुकूल, आर्थिक रूप से लाभप्रद और सामाजिक रूप से सही है। सतत अथवा टिकाऊ खेती मृदा स्वास्थ्य को बढ़ावा देने, जल संरक्षण, अपशिष्ट को कम करने और जैव विविधता के संरक्षण पर जोर देती है।

अध्ययन का उद्देश्य

1. बढ़ती जनसंख्या के साथ-साथ भावी पीढ़ी की आवश्यकताओं को ध्यान में रखना।
2. पर्यावरणीय गुणवत्ता और प्राकृतिक संसाधन को बढ़ाना जिस पर कृषि अर्थव्यवस्था निर्भर करती है।
3. मृदा की उर्वरा शक्ति को बनाए रखने के साथ-साथ रसायनों के अत्यधिक उपयोग को सीमित करना।
4. कृषि कार्यों की आर्थिक व्यवहार्यता को बनाए रखना।
5. किसानों के लिए बाहरी आदानों को कम करना तथा कृषि को आर्थिक रूप से लाभकारी बनाना।
6. स्मार्ट कृषि के आधुनिक प्रौद्योगिकी की समझ विकसित करना तथा सूचना तंत्र व डेटा प्रबंधन को बढ़ावा देना।
7. स्मार्ट कृषि के अनुप्रयोग से उच्च फसल उत्पादकता बढ़ाने के साथ-साथ अपव्यय को कम से कम करने का कौशल विकसित करना।

आजादी के बाद से ही भारत के सामने अनेकों समस्याएँ थी, इन्हीं समस्याओं में से एक समस्या थी भुखमरी। यद्यपि भारत एक कृषि प्रधान देश था पर आजादी के समय मात्र 36 करोड़ जनसंख्या को भोजन उपलब्ध कराना सरकार के लिए एक गंभीर समस्या बनी हुई थी। इस गंभीर समस्या से निपटने के लिए सरकार द्वारा देश में पहली पंचवर्षीय योजना में अपने मुख्य फोकस के रूप में कृषि विकास को रखा गया था। इसके बावजूद दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान देश ने एक गंभीर खाद्य संकट का सामना किया,अतः सन् 1958 में भारत में खाद्य समस्या की कमी के कारणों की जाँच करने व उसे दूर करने के उपायों के लिए एक टीम का गठन किया। इस गठित टीम ने पूरे देश में अनेक शोध कार्य किया तथा सरकार को यह सुझाव दिया कि भारत को इस गंभीर समस्या से निपटने व खाद्यान्न उत्पादन बढाने के लिए उन क्षेत्रों में अधिक फोकस करना चाहिए जहाँ पर कृषि उत्पादन बढ़ाने की अधिक संभावना है। इसके परिणाम स्वरूप सरकार ने पहले से ही विकसित हुई कृषि क्षेत्रों को अधिक खाद्यान्न उत्पादन प्राप्त करने के लिए गहन खेती के रूप

में चुना गया। भारत में हरित क्रांति के दौरान फसल उत्पादन में आशातीत वृद्धि होने के कारण निरंतर फसल उत्पादन मात्रा बढ़ने लगी तथा सभी प्रकार के फसलों की उत्पादकता दर भी बढ़ने लगी।

तालिका क्रमांक 1

भारत : विभिन्न फसलों की उत्पादकता में वृद्धि

(उत्पादन- कि.ग्रा/हेक्टेयर)

फसल	l =~									
	1950–51	1965–66	1969–70	1975–76	1980–81	1984–85	1985–86	2000–01	2010–11	2017–18
गेहूं	663	827	1209	1410	1630	1870	2046	2708	2988	3368
चावल	668	–	1073	1235	1336	1417	1363	1901	2239	2576
ज्वार	353	429	522	591	660	713	633	764	949	956
बाजरा	288	314	426	496	458	569	344	688	1079	1231
मक्का	547	1005	968	1203	1139	1456	1146	1822	2542	3065
अनाज	522	–	865	1041	1142	1285	1323	1626	1930	2235
दलहन	441	438	531	533	473	526	544	544	691	853
मुंगफली	775	554	720	935	736	898	719	977	1411	1893
कपास	88	–	123	138	152	196	197	190	499	443
समस्त तिलहन	**481**	**419**	**522**	**627**	**532**	**684**	**570**	**810**	**1193**	**1284**

Source- Agricultural Statistics, At A Glance 2019, Govt. of India

3. रासायनिक उर्वरकों का खपत—देश में तीन प्रकार के उर्वरकों- नाईट्रोजन, फास्फोरस, एवं पोटेशियम के खपत की प्रवृति का आंकलन किया गया है, जिसमें स्पष्ट होता है कि स्वतंत्रता के पश्चात् 1950-51 में नाईट्रोजन 58.7 हजार टन, 1960-70 में 210 हजार टन, 2000-01 में 10920.2 हजार टन का खपत हुआ। फास्फोरस उर्वरक के खपत की प्रवृति भी निरंतर बढ़ती जा रही है। वर्ष 1950-51 में जहाँ मात्र 6.9 हजार टन 1970-71 में बढ़कर 462 हजार टन, 2010-11 में 8049.1 हजार टन तथा 2018-19 में घटकर 6967.9 हजार टन की खपत हुई।

तालिका क्रमांक - 2

भारतः प्रमुख रासायनिक उर्वरकों का खपत

(आंकडे हजार टन में)

o"kZ	ukbVªkstu ¼N½	QkLQksjl ¼P½	iksVsf'k;e ¼K½	dqy
1950&51	58-7	6-9	&	65-6
1960&61	210-0	53-1	29-0	292-1
1970&71	1487-0	462-0	228-0	2177-0
1980&81	3678-1	1213-6	623-9	5515-6
1990&91	7997-2	3221-0	1328-0	12546-2
2000&01	10920-2	4214-6	1567-5	16702-3
2010&11	16558-2	8049-1	3514-3	28122-2
2015&16	17372-3	6978-8	2401-5	26752-6
2018&19	17628-2	6967-9	2779-1	27375-2

देश में पोटेशियम उर्वरक की खपत की प्रवृति निरंतर बढ़ती जा रही है। 1950-51 में इसके खपत का कोई रिकार्ड दर्ज नहीं है। 1960-61 में 29.0 हजार टन, तथा 2018-19 में 2779.1 हजार टन पोटेशियम की खपत हुई। मानव शरीर पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभावों के कारण रासायनिक उर्वरकों के खपत में धीरे-धीरे कमी हो रही है। देश में जैव उर्वरकों के प्रयोग की प्रवृति बढ़ने लगी है। देश में प्रति हेक्टेयर उर्वरकों के खपत की प्रवृति धनात्मक रही है। वर्ष 2001-02 में यह दर 92.33 कि.ग्रा./हेक्टेयर, 2005-06 में 105.53 कि.ग्रा./हेक्टेयर, 2009-10 में 140.15 कि.ग्रा./हेक्टेयर, तथा 2018-19 में 133.12 कि.ग्रा./हेक्टेयर, हो रही है।

4. जैविक खेती

मानव-जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए नितान्त आवश्यक है कि प्राकृतिक संसाधन प्रदूषित न हों, शुद्ध वातावरण रहे एवं पौष्टिक आहार मिलता रहे। इसके लिए हमें जैविक खेती की कृषि पद्धतियों को अपनाना होगा जोकि हमारे नैसर्गिक संसाधनों एवं मानवीय पर्यावरण को प्रदुषित किये बगैर समस्त जनमानस को खाद्य सामग्री उपलब्ध करा सकेगी तथा हमें खुशहाल जीने की राह दिखा सकेगी। जैविक खेती की विधि रासायनिक खेती की तुलना में बराबर या अधिक उत्पादन देती है अर्थात जैविक खेती मृदा की उर्वरता एवं कृषकों की उत्पादकता बढ़ाने में पूर्णतः सहायक है। वर्षा आधारित क्षेत्रों में जैविक खेती की विधि और भी अधिक लाभदायक है।

प्रमुख जैविक खाद एवं कीटनाशक-1 जैविक खादें 2 नाडेप 3 बायोगैस स्लरी 4 वर्मी कम्पोस्ट 5 हरी खाद 6 जैव उर्वरक (कल्चर) 7 गोबर की खाद 8 नाडेप फास्फो कम्पोस्ट 9 पिट कम्पोस्ट 10 मुर्गी का खाद 11 भभूत अमृतपानी 12 अमृत संजीवनी 13 मटका खाद 14 गौ-मूत्र 15 नीम- पत्ती का घोल/निबोली/खली 16 मट्ठा 17 लकडी की राख 18 नीम व करंज खली।

भूमि की उत्पादन क्षमता बढाने में जैव उर्वरकों का महत्व-रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से उपज में वृद्धि तो होती है परन्तु अधिक प्रयोग से मृदा की उर्वरता तथा संरचना पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, इसलिए रासायनिक उर्वरकों के साथ जैव उर्वरकों के प्रयोग की सम्भावनाएँ बढ़ रही है। जैव उर्वरकों के प्रयोग से फसल को पोषक तत्वों की आपूर्ति होने के साथ मृदा उर्वरकता भी स्थिर बनी रहती है।

जैव उर्वरक—जैव उर्वरक जीवाणु खाद है। खाद में मौजूद लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु वायुमण्डल में पहले से विद्यमान नाईट्रोजन को पकड़कर फसल को उपलब्ध कराते हैं और मिट्टी में मौजूद अघुलनशील फास्फोरस को पानी में घुलनशील बनाकर पौधों को देते हैं। इस प्रकार रासायनिक खाद की आवश्यकता सीमित हो जाती है। वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका है कि जैव खाद के प्रयोग से 30 से 40 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर भूमि को प्राप्त हो जाती है तथा उपज 10 से 20 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। अतः रासायनिक उर्वरकों को थोडा कम प्रयोग कर के बदलें में जैविक खाद का प्रयोग करके फसलो की भरपूर उपज पाई जा सकती है। फास्फाबैक्टीरिया और माइकोराइजा नामक जैव उर्वरक के प्रयोग से खेत में फास्फोरस की उपलब्धता में 20 से 30 प्रतिशत की बढोत्तरी होती है। प्रमुख जैव उर्वरक एवं प्रयोग विधि निम्न है-

तालिका क्रमांक-3

जैव उर्वरक एवं उनका प्रयोग विधि

जैव उर्वरक	उपयुक्त फसलें	संस्तुत प्रयोग विधि	आवश्यक मात्रा
राइजोबियम	सभी दलहनी फसलों के लिए	बीजोपचार	200 ग्राम प्रति 10–15 किलोग्राम बीज
एजोबैक्टर	दलहनी फसलों को छोडकर अन्य सभी फसलों के लिए	बीजोपचार, जड उपचार, मृदा उपचार	200 ग्राम प्रति 10–15 किलोग्राम बीज या 5 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर
एजोस्पिरिलम	दलहनी फसलों को छोडकर अन्य सभी फसलों के लिए, गन्ने के लिए विशेष उपयोगी	बीजोपचार, जड उपचार, मृदा उपचार	200 ग्राम प्रति 10–15 किलोग्राम बीज या 5 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर
फास्फोबैक्टीरिया (पी.एस.बी)	सभी फसलों के लिए	बीजोपचार, जड उपचार, मृदा उपचार	200 ग्राम प्रति 10–15 किलोग्राम बीज या 5 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर

जैव उर्वरकों से लाभ—1. ये अन्य रासायनिक उर्वरकों से सस्ते होते हैं जिससे फसल उत्पादन की लागत घटती है। 2. जैव उर्वरकों के प्रयोग से नाईट्रोजन व घुलनशील फास्फोरस की फसल के लिए उपलब्धता बढ़ती है। 3. इससे रासायनिक खाद का प्रयोग कम हो जाता है जिससे भूमि की मृदा संरचना ठीक हो जाती है। 4. जैविक खाद से पौधों में वृद्धि कारक हारमोन्स उत्पन्न होते हैं जिनसे उनकी पैदावार पर अच्छा प्रभाव पडता है। 5. जैविक खाद से खेत में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या में बढ़ोत्तरी होती है।

सावधानियाँ- नाइट्रोजनी जैव उर्वरकों के साथ फास्फोबैक्टीरिया का प्रयोग अत्यन्त लाभकारी है। प्रत्येक दलहनी फसल के लिए अलग राईजोबियम कल्चर आता है अतः दलहनी फसल के अनुरूप ही राइजोबियम कल्चर प्रयोग किया जा सकता है। जैव उर्वरकों को धूप में कभी नहीं रखना चाहिए। कुछ दिन के लिए रखना हो तो मिट्टी के घडे का प्रयोग बहुत अच्छा है। फसल विशेष के अनुसार ही जैविक खाद का चुनाव होना चाहिए। लगभग 20 साल के निरंतर व गहन अनुसंधान करने के पश्चात पहले टाटा एनर्जी रिसर्च इंस्टीट्यूट नाम से जाने वाली अनुसंधान संस्थान द्वारा माइकोराइजा को बनाने की तकनीक विकसित की गई। इसी संस्था के तीन निजी संस्थानों—कैडिला (गुजरात, 70 टन), के.सी.पी. शुगर इंडस्ट्रीज एण्ड कारपोरेशन, (वयूर, आन्ध्र प्रदेश, 250 टन) एवं मैजेस्टीक एग्रोनोमिक्स प्रा. लि. (ऊना, हिमाचल प्रदेश, 1400 टन) प्रतिवर्ष माइकोराईजा उत्पादित कर रहे हैं। इसी अनुसंधान की श्रृंखला में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के वैज्ञानिकों का अनुंसधान भी महत्वपूर्ण है।

जैविक खाद का फसल उत्पादन पर प्रभाव-मूँगफली एवं सूरजमुखी को छोड़कर प्रायः सभी प्रकार की फसलों पर इस जैविक खाद व जैविक फफूंदीनाशक के बहुत ही अच्छे परिणाम प्राप्त होते हैं। इनमें 92 प्रतिशत तक रोग से मुक्ति दिलाने की क्षमता है (गोभी एवं डैम्पीग ऑफ), 95 प्रतिशत तक की कमी उन सभी सूक्ष्म जीवाणुओं की जो जमीन में रोग पैदा करते हैं (फ्यू. आक्सीसपोरम मैलोनिस) और इन सभी के कारण फसल उत्पादकता 37 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। इस तरह से यह न केवल रोगों को रोकने का एक जैविक योग है बल्कि फसलों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए जैविक खाद भी है। आज के बदलते परिवेश में जब जैविक खेती को प्रोत्साहन दिया जाना आवश्यक है। औषधीय पौधों की खेती का क्षेत्रफल प्रति वर्ष बढ़ रहा है। अन्य जैविक खादों के साथ-साथ भारतीय वैज्ञानिकों द्वारा विकसित प्रोद्योगिकी को भारत के उद्योगपतियों द्वारा अपनाया जाना चाहिए। केवल एक कम्पनी पूरे भारतवर्ष की माँग को पूरा नहीं कर सकती है। अतः बेरोजगार कृषि स्नातकों, वैज्ञानिकों और किसानों के क्लबों को आगे आना चाहिए।

5. स्मार्ट कृषि की प्राथमिकताएँ -

खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ.ए.ओ.) का अनुमान है कि वैश्विक स्तर पर भोजन एवं चारे की अपेक्षित माँगों को पूरा करने के लिए 2050 तक 60 प्रतिशत तक बढ़ाना पडेगा। कृषि पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभाव तथा जलवायु परिवर्तन के आसन्न संकट के बीच यह कार्य और भी कठिन होता दिखाई दे रहा है। खाद्य सुरक्षा और कृषि विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए बदलते परिदृश्य में जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन तथा प्राकृतिक संसाधन आधार को क्षति पहुँचाये बिना हासिल किया जाना चाहिए। एफ.ए.ओ ने खाद्य सुरक्षा और जलवायु चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए सतत विकास (सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरण) के तीन आयामों के रूप में जलवायु स्मार्ट कृषि (सी.एस.ए.) को परिभाषित किया है। ये तीन है- 1.कृषि उत्पादकता और आय में लगातार वृद्धि।

2.जलवायु परिवर्तन का अनुकूलन और उसके प्रति लचीलापन।

3.जहां तक संभव हो ग्रीन हाऊस गैसों का न्यूनीकरण किया जाना या हटाना।

इन तीन परस्पर जुड़ी हुई चुनौतियों का सामना करने के लिए उत्पादन प्रणालियों को कृषि भूमि स्तर पर अधिक कुशल और लचीला होने की आवश्यकता है। संसाधन संरक्षण ओर नूतन कार्य प्रणालियों को संसाधन उपयोग में अधिक प्रभावी होना चाहिए। अधिक खाद्यान्न उत्पादन के लिए भूमि, जल और आगतों का कम उपयोग होना चाहिए और इसे बदलाव व आघातों को झेलने के लिए अधिक लचीला होना चाहिए। इन संसाधन संरक्षण प्रौद्योगिकियों (आरसीटी) और नवीन कार्यप्रणालियों को नियत-स्तर पर सर्वाधिक सटीकता के साथ प्रयोग किया जाता है, जिससे सूचना और संचार प्रौद्योगिकी निर्णय समर्थन प्रणालियों के साथ खेत-स्तर पर प्रयुक्त सामग्री जैसे बीज, उर्वरक, कीटनाशक, सिंचाई आदि में अधिक सटीकता प्राप्त हो सके और इसे ही 'स्मार्ट कृषि' माना जाता है।

हाल ही में कृषि उत्पादन में व्यापक नवाचार हुए है, जिससे न केवल उत्पादकता में सुधार हुआ है, बल्कि वे पर्यावरण की सुरक्षा के लिए भी उतने ही महत्वपूर्ण है। उर्वरक प्रबंधन के लिए सूचना प्रौद्योगिकी से संबंधित कई प्रणाली-अनुसंधान उपकरण उपलब्ध हो गए है। भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस), ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम (जीपीएस) और रिमोट सेसिंग (आरएस) की शुरूआत के साथ किसान अब प्रत्येक क्षेत्र की स्थान विशेष स्थितियों के लिए पोषक तत्वों से संबंधित सुझावों और जल प्रबंधन मॉडल को परिष्कृत कर सकते हैं। स्मार्ट कृषि में उत्पादन क्षमता और कृषि उत्पादों की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए मौजूदा कृषि तकनीक में उन्नत प्रौद्योगिकियों का एकीकरण शामिल है। स्मार्ट कृषि जिसमें उत्पादन सामग्री का (जो आवश्यक है) जब और जहाँ आवश्यक हो, प्रयोग होता है, आधुनिक कृषि

क्रांति की तीसरी लहर बन गई है (पहली मशीनीकरण थी ओर दूसरी आनुवांशिक संशोधन के साथ हरितक्रांति), और आजकल यह बडी मात्रा में आंकड़ों की उपलब्धता के कारण कृषि जानकारी प्रणालियों की वृद्धि के साथ परिष्कृत हो रही है।

सामान्यतः स्मार्ट कृषि में सात ई का विशेष महत्व है—

(1) उत्पादन बढाना

(2) आर्थिक दृष्टि से कृषि की स्वीकार्यता

(3) जीवाश्म इंधन का सीमित उपयोग।

(4) प्राकृतिक संसाधनों का कुशल प्रयोग।

(5) कृषि लाभों का समान वितरण

(6) रोजगार का सृजन

(7) पर्यावरण और पारिस्थितिकीय

उच्च संसाधन उपयोग दक्षता के लिए कृषि सम्बद्ध नूतन कार्य प्रणालियाँ—

(1) बीज बुवाई और रोपण—खेतों में सही स्थान और सही मात्रा में बीज बोना बहुत कठिन होता है। प्रभावी रूप से बीज बोने के लिए दो बातों पर नियंत्रण की आवश्यकता होती है। सही गहराई पर बीज बोना, और पौधों की सही वृद्धि के लिए उचित दूरी पर पौधे लगाना। हर बार इन चीजों को बेहतर करने के लिए सटीक बीजारोपण उपकरण तैयार किए गए है। जियोमैपिंग और सेंसर डाटा का संयोजन जो मिट्टी की गुणवत्ता, घनत्व, नमी और पोषक तत्वों के स्तर की जानकारी देता है, बीजारोपण प्रक्रिया में लगाए जाने वाले अनुमान को काफी घटाता है। बीज को अंकुरित होने और बढ़ने की सबसे अच्छी अवस्था मिलती है और समग्र रूप से फसल उत्तम होती है। भविष्य में मौजूद सीडर्स ट्रैक्टरों और आईसीटी सक्षम प्रणाली के साथ उपलब्ध होंगे जो किसानों को फीडबैक भी देंगे। बीजरोपण और रोपण में उपयोग के लिए प्रोटोटाईप ड्रोन का निर्माण और परीक्षण भी किया जा रहा है। ये ड्रोन संपीडित हवा का उपयोग करके उर्वरक और पोषक तत्वों के साथ बीज की फली वाले कैप्सूलों को जमीन में सीधे रोंप सकेंगे।

(2) पोषक तत्व प्रबंधन में सुस्पष्टता—स्थान विशेष पोषक तत्व प्रबंधन (एसएसएनएम) एक सुनियोजित पद्धति है जो पोषक तत्वों से फसलों के पोषण पर सम्पूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं। जब भी विभिन्न फसल उत्पादन प्रणाली के अंतर्गत पोषक तत्वों की माँग और आपूर्ति के बीच तालमेल बनाने की आवश्यकता होती है। पोषक तत्वों की विशेष परिवर्तनशीलता और बेहतर पोषक तत्व उपयोग दक्षता के प्रबंधन का हल उपलब्ध कराता है। इसके लिए निम्न महत्वपूर्ण है—

(i) स्मार्ट उर्वरक: स्मार्ट उर्वरक नए प्रकार के उर्वरक है जो सूक्ष्मजीवों और नैनो पदार्थों के आधार पर तैयार किए जाते हैं। नियंत्रित निर्गमन और वितरण प्रणाली पर बल देने के साथ नैनो प्रौद्योगिकी आधारित स्मार्ट उर्वरक विकास पौधों की माँगों के अनुरूप पोषक तत्वों की उपलब्धता को संतुलित करते हैं, जिससे पोषक तत्वों की क्षति कम होती है। पोषक तत्व उपयोग क्षमता में वृद्धि से फासफोरस की मात्रा आधी से एक चौथाई हो जाती है और पैदावार 10 प्रतिशत बढ जाती है। स्मार्ट उर्वरक से सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा में 90 प्रतिशत तक की कमी होती है। कम निवेश के कारण किसानों की आय 15-20 प्रतिशत तक बढ़ सकती है। बायोस्टिमुलंट्स पौधों के हारमोनों को उद्दीप्त करते हैं जो जड़ों के विकास, जड़ों की कार्यक्षमता, पोषक तत्वों का उद्ग्रहण और गुणों को प्रभावित करते हैं और यह रासायनिक से जैविक खाद व्यवस्था में स्थानांतरित करने में फायदेमंद होते हैं। दूसरी और बायोफर्टिलाइजर स्वयं पोषक तत्वों की आपूर्ति किए बिना पोषक तत्वों की उपलब्धता पर अप्रत्यक्ष प्रभाव देता है। वे सजीव सूक्ष्मजीव फॉर्मूलेषन है जो पोषक तत्वों की उपलब्धता और उद्ग्रहण में सहायता करते हैं।

(ii) लीफ कलर चार्ट:–लीफ कलर पौधे की नाइट्रोजन स्थिति का एक अच्छा संकेतक है। पत्ती की क्लोरोफिल मात्रा और पत्ती के रंग में परिवर्तन के माध्यम से फसल की आवश्यकतानुसार नाइट्रोजन की आपूर्ति का मिलान करके इसके उपयोग को अनुकूलित किया जा सकता है। फिलीपींस स्थित अंतर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित लीफ कलर चार्ट किसानों की मदद कर सकता है क्योंकि पत्ती के रंग की गहनता चावल के पौधे में नाइट्रोजन की स्थिति से संबंधित है। लीफ कलर चार्ट का उपयोग करके पत्ती के रंग की निगरानी नाइट्रोजन के प्रयोग के सही समय के निर्धारण में मदद करती है। सभी परिस्थितियों में लीफ कलर चार्ट का उपयोग सरल, आसान और किफायती है। अध्ययनों से पता चलता है कि लीफ कलर चार्ट का उपयोग करके नाइट्रोजन को 10-15 प्रतिशत बचाया जा सकता है।

(iii) नोरमलाइज्ड़ डिफरेंस वेजीटेशन इंडेक्स (एनडीवीआई) सेंसर्स: गेहूँ और चावल की फसलों में अध्ययनों से पता चला है कि रिमोट सेंसिंग आधारित नोरमलाइज्ड डिफरेंस वेजीटेशन इंडेक्स (एनडीवीआई) सेंसर्स का उपयोग करके आवश्यकतानुसार नाईट्रोजन के प्रयोग से बिना किसी उपज क्षति के 15-20 प्रतिशत नाइट्रोजन बचाई जा सकती है जिससे किसानों की लाभ सीमा को बढाया जा सकता है।

(iv) सॉयल प्लांट एनालिसिस डेवलपमेंट (एसपीएडी): पत्ती में नाइट्रोजन की स्थिति की निगरानी और चावल में नाइट्रोजन टॉपड्रेसिंग के समय में सुधार के लिए एक

सरल, त्वरित और पोर्टेबल नैदानिक उपकरण है। एसपीएडी कम लागत वाला क्लोरोफिल मीटर है और किसानों के लिए किफायती है। एसपीएडी ग्रेषहोल्ड का उपयोग करके पत्ती में नाइट्रोजन की स्थिति की निगरानी करना और सिंचित धान पर नाइट्रोजन की स्थिति की निगरानी करना संभव होगा।

(v) पोषक विशेषज्ञ (एनई): फसल की पैदावार, पर्यावरण गुणवत्ता और समग्र कृषि स्थिरता में सुधार के लिए निर्णय समर्थन प्रणाली सॉफ्टवेयर द्वारा निर्देशित हाल ही में विकसित सटीक पोषक तत्व प्रबंधन टेक्नोलॉजी है। सीआईएमएमवाईटी के सहयोग से इंटरनेशनल प्लांट न्यूट्रीशन इंस्टीट्यूट ने पोषक विशेषज्ञ (एनई) टेक्नोलॉजी विकसित की है, यह एक पोषक तत्व निर्णय समर्थन प्रणाली है जो स्थान विशेष पोषक तत्व प्रबंधन (एसएसएनएम) नियमों पर आधारित है। एनई उपज के अनुसार और लक्षित कृषि संबंधी क्षमताओं के साथ-साथ देशी स्रोतों से पोषक तत्वों की भरपाई को देखते हुए निर्धारित उर्वरक मात्रा सुझाता है। देश के प्रमुख मक्का उगाने वाले कृषि पारिस्थितिकी क्षेत्रों में उर्वरक की मात्रा सुझाने के लिए एनई का उपयोग सफलतापूर्वक किया गया है जिससे मौजूदा उर्वरक सुझावों की वानिस्पतिक उपज और कृषि लाभप्रदता में वृद्धि हुई है।

(vi) यूरिया डीप प्लेसमेंट (यूडीपी): अंतर्राष्ट्रीय उर्वरक विकास केन्द्र (आईएफडीसी) द्वारा विकसित यूडीपी तकनीक चावल प्रणालियों के लिए जलवायु स्मार्ट समाधान का एक अच्छा उदाहरण है। चावल के लिए मुख्य नाइट्रोजन उर्वरक यूरिया के प्रयोग की आम तकनीक ब्रॉडकास्ट एप्लीकेशन है जो एक बहुत ही अप्रभावी तरीका है, जिसमें 60-70 प्रतिशत नाइट्रोजन की क्षति होती है और जो गैस उत्सर्जन और जल प्रदूषण को बढ़ाता है। यूडीपी तकनीक में यूरिया के 1-3 ग्राम के ''बिक्रेट'' बनाए जाते हैं जिन्हे धान की रोपाई के बाद मिट्टी में 7 से 10 से.मी. की गहराई पर रखा जाता है। इस तकनीक से नाइट्रोजन की कमी 40 प्रतिशत तक कम हो जाती है और यूरिया प्रभाविता 50 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। यूरिया के उपयोग में औसतन 25 प्रतिशत की कमी के साथ इसकी पैदावार 25 प्रतिशत तक बढ़ जाती है।

(3) कुशल जल प्रबंधन के लिए नूतन प्रणालियाँ—मानव उत्तरजीविता और सतत विकास के लिए जल सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है क्योंकि इसकी उपलब्धता दिन-प्रतिदिन कम होती जा रही है। सिंचाई क्षेत्र के लिए जल की कुल अनुमानित माँग मौजूदा-स्तर से अधिक होगी इसलिए तीन प्रमुख चुनौतियां होंगी (अ) सिंचित क्षेत्रों में उपलब्ध जल संसाधनों के कुशल और उत्पादक उपयोग से ''जल की प्रति बूंद अधिक फसल'' (ब) कम उत्पादन वाले पारिस्थितिकी तंत्रों जैसे वर्षा-आधारित और जलमग्न क्षेत्रों की उत्पादकता में

वृद्धि और (स) कृषि उत्पादन के लिए अपशिष्ट जल का उपयोग करना। यह प्रभावी सिंचाई प्रबंधन के माध्यम से ही संभव है।

(अ) स्वचालित सिंचाई प्रणाली—स्प्रिंकलर, ड्रिप और उपसतह ड्रिप सिंचाई जैसी दबाव वाली सिंचाई प्रणाली पहले से ही प्रचलित सिंचाई विधियां है जो किसानों को यह नियंत्रित करने की अनुमति देती हैं कि उनके फसलों को कब और कितना जल मिलता है। नमी के स्तर और पौधों के स्वास्थ्य की निरंतर निगरानी करने के लिए इन सिंचाई प्रणालियों को तेजी से परिष्कृत इंटरनेट ऑफ थिंग्स से सुसज्जित सेंसर के साथ जोड़कर किसान केवल आवश्यकता होने पर ही हस्तक्षेप कर पाएंगे अन्यथा प्रणाली स्वायत्त रूप से संचालित होती रहेगी। हालांकि दबाव वाली सिंचाई प्रणालियां बिल्कुल रोबोटिक नहीं है लेकिन वे स्मार्ट फार्म के संदर्भ में पूरी तरह से स्वायत्त रूप से काम कर सकती है।

(ब) खेत में जलाशय (ओ.एफ.आर.)—वर्षा जल संचयन और कुशल जल उपयोग भविष्य में वर्षा-आधारित कृषि को बनाए रखने के लिए अपरिहार्य विकल्प है। स्थिरता और लोगों की आजीविका में सुधार सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न राज्यों ने ओएफआर के लिए विशेष कार्यक्रम शुरू किए है।

(स) सीमित सिंचाई आपूर्ति—सीमित जल उपलब्धता की स्थिति में जल के अधिक प्रभावी और उचित उपयोग के लिए आंशिक फसल जल की आवश्यकताओं को पूरा करने के आधार पर सिंचाई कार्यनीतियों को अपनाया जाना चाहिए। विनियमित सीमित सिंचाई और नियंत्रित लेट-सीज़न सीमित सिंचाई जैसी सिंचाई प्रणालियां अपनाना जल संरक्षण और फसल उत्पादन के लिए उपयोग किए जाने वाले जल की मात्रा को घटाने के लिए एक स्वीकृत कार्यनीति बनाया जाना प्रस्तावित है।

(4) खरपतवार और कीट प्रबंधन के लिए नवीन पद्धतियाँ

1. नई प्रकार की खरपतवार नाशकः—हाल ही में खरपतवार उगने के बाद (पोस्ट एमरजेंस) प्रयोग की जाने वाली कुछ नई पीढी की खरपतवार नाशक बाजार में उपलब्ध है जो खेत की फसलों में खरपतवारों के चयनात्मक प्रभावी नियंत्रण की गारटी देते हैं। बहुत कम मात्रा में इन खरपतवारनाशकों की आवश्यकता होती है और ये रखरखाव और लाने ले-जाने में बहुत आसान है।

2. खरपतवार नाशक प्रतिरोधी फसलें (एचआरसी):—खरपतवार नाशक प्रतिरोधी फसलें आनुवांशिक रूप से संशोधित (जीएम) फसल होती है जो विशेष ब्रॉड-स्पेक्ट्रम खरपतवार नाशक का प्रतिरोध करने के लिए संरक्षित की जाती है। ये आसपास के खरपतवारों को मारती है, लेकिन उगी फसल को सुरक्षित रखती है।

वर्तमान में फसल छिड़काव अनुप्रयोगों के लिए ड्रोन उपलब्ध है जो एक और श्रम-गहन कार्य को स्वचालित करने का अवसर प्रदान करते हैं। जीपीएस, लेजर मापन और अल्ट्रासोनिक स्थिति संयोजन का उपयोग करते हुए फसल पर छिड़काव करने वाले ड्रोन ऊंचाई और स्थान को आसानी से अनुकूलित कर सकते हैं और हवा की गति, स्थलाकृति और भौगोलिक स्थिति जैसे कारको का समायोजन कर सकते हैं। ड्रोन फसलों पर अधिक प्रभावी ढंग से अधिक सटीकता और कम क्षति के साथ खरपतवारनाशकों, उर्वरकों और कीटनाशकों के छिड़काव में सक्षम बनाता है। निराई के लिए डिज़ाइन किए गए रोबोट उसी मूल मशीन के साथ कीटों की पहचान और कीटनाशकों के इस्तेमाल करने के लिए सेंसर, कैमरा और स्प्रेयर से लैस हो सकते हैं। ये रोबोट और उनके जैसे अन्य आने वाले समय में खेतों पर अलग-अलग काम नहीं करेंगे। इन्हें ट्रैक्टरों और इंटरनेट ऑफ थिंग्स से जोडा जाएगा जिससे समस्त कार्य स्वतः स्वयं ही संपन्न होगा।

5. भारत में स्मार्ट खेती के लिए चुनौतियाँ

(1) संचार कनेक्टिविटी की समस्या—अच्छी कनेक्टिविटी की कमी या खराब नेटवर्क प्रदर्शन और डिजिटल तकनीक को अपनाने में बाधा उत्पन्न कर, स्मार्ट और टिकाऊ कृषि के विकास को सीमित कर देगी। चूंकि मृदा सेंसर, उपग्रह मानचित्रण प्रणाली और निगरानी उपकरण जैसे कई सटीक कृषि उपकरण डेटा भंडारण, पहुँच और संचरण के लिए क्लाउड सेवाओं पर निर्भर हैं, इसलिए दूरस्थ क्षेत्रों में क्लाउड-आधारित कंप्यूटिंग में भी उल्लेखनीय सुधार की आवश्यकता है।

(2) डेटा वॉल्यूम का प्रबंधन—जहाँ डेटा स्मार्ट कृषि में एक अनिवार्य भूमिका निभाता है, वहीं कई किसानों और कृषि व्यवसायियों के लिए डेटा प्रबंधन एक सतत चुनौती है। यहाँ तक कि एक छोटा सा खेत भी संबंधित संचालन और विपणन निर्णयों को सूचित करने के लिए बड़ी मात्रा में डेटा एकत्रित और संग्रहीत करता है। ऐसे में पूरे एक मौसम के दौरान दैनिक एवं साप्ताहिक आधार पर उन सैकड़ों हजारों डेटा बिंदुओं की निगरानी या विश्लेषण करना लगभग असंभव हो जाएगा।

(3) जोत का छोटा आकार—अधिकांश भारतीय कृषि में जोत का छोटा आकार वर्तमान में उपलब्ध स्मार्ट कृषि तकनीक से आर्थिक लाभ को सीमित करता है। भारत में, छोटी और सीमांत जोत (ढ2 हेक्टेयर) कुल जोत का 86% है, जबकि बड़ी जोत (झ10 हेक्टेयर) कुल भूमि जोत का महज 0.57% भाग ही है।